महाप्रभु वल्लभाचार्य

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्रीनिवास बालभारती - 117

महाप्रभु वल्लभाचार्य

तेलुगु मूल

डॉ. भीमसेन निर्मल

अनुवाद

डा.सी. अन्नपूर्णा

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2013

Srinivasa Bala Bharati - 117
(*Children Series*)

MAHAPRABHU VALLABACHARYA

Telugu Version
Dr. Bhimasena Nirmal

Translator
Dr. C. Annapurna

Editor-in-Chief
Prof. Ravva Sri Hari

T.T.D. Religious Publications Series No.972
©All Rights Reserved
First Edition - 2013

Copies:

Price:

Published by
L.V. Subrahmanyam, I.A.S.,
Executive Officer
Tirumala Tirupati Devasthanams
Tirupati.

Printed at
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati.

दो शब्द

लाड प्यार से पलनेवाले सुंदर बच्चे का मन कांच जैसा निर्मल रहता है। उन के सामने हम जिस तरह के संस्कार रखते हैं, वे ही प्रतिबिंबित होते हैं। अमिट छाप छोडनेवाले उन संस्कारों को वे जीवन भर याद करते हैं। संस्कार से भावि भारत के नागरिक पले बढे होते हैं, तो ही अच्छे ढंग से इस देश को संवारते है। अतः उन बच्चों में अपनी संस्कृति की महानता, बडप्पन भारत जाति के लिए अलंकार बनाकर विश्व स्तर के अच्छे गुणों को माँ की गोद से ही घोलकर डालने की आवश्यकता है। जितनी भी विद्याएँ सीखने से भी, जितनी भी क्षेत्रों में लब्ध प्रतिष्ठ बनने से भी लोगों में उस प्रकार के संस्कारों की कमी होने से प्रमाणों में गिरावट आ जाती है और भारत जाति अंधकार में पड जाती है। इसलिए हमारे देश में पैदा होकर, एक आदर्श के लिए समर्पित होकर, हमारे लिए गर्व के कारण बननेवाले कई महा पुरुष, महान पतिव्रताओं की कहानियों को नन्हें बच्चों तक पहुँचाने के लिए ही यह प्रयास है। इस का उद्देश्य है प्राचीन भारतीय महान आदर्शों को परोक्ष रूप में बताना।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने इसी संकल्पना से 'श्रीनिवास बालभारति' नामक पुस्तकमाला का नन्हें बच्चों के लिए शुभारंभ किया। कई लोग बोल रहे हैं कि आप की बाल भारती का हमें और हमारे परिवार के सभी लोगों को उपयोग हो रहा है। आप पढ़कर, अपने बच्चों से भी पढ़वाएँगे तो हमारे उद्देश्य की तो पूर्ती होगी।

इस प्रकार बाल साहित्य को अच्छे ढंग से सजाकर और संवार कर अच्छी रचनाओं की तैयारी करके सब के प्रयोजन के लिए प्रस्तुत करने वाले संपादक डॉ एस.बी. रघुनाथाचार्य (को-आर्डिनेटर, पब्लिकेशन्स, टी.टी.डी) बधाई के पात्र हैं। इस योजना में सहायता देनेवाले रचयिता और कलाकरों को भी मैं धन्यवाद ज्ञापन करता हैं।

कार्यकारी अधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

प्राक्कथन

आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। अगर वे बचपन में ही महोन्नत सज्ञनों की जीवनियों के बारे में जानकारी लें, तो अपने भावी जीवन को उदात्त धरातल पर उज्ज्वल रूप से जीने के मौके को प्राप्त कर सकते हैं। उन महोन्नत सज्ञनों के जीवन में घटित अनुभवों से हमारी भारतीय संस्कृति, जीवन में आचरणीय मूल धार्मिक सिद्धान्तों तथा नैतिक मूल्यों आदि को वे निश्चय ही सीख सकते हैं। आज की पाठशालाओं में इन विषयों को सिखाने की संभावना नहीं है।

उपरोक्त विषयों को ध्यान में रखकर तिरुमल तिरुपति देवस्थान के प्रचुरण विभाग ने डॉ.एस.वी.रघुनाथाचार्य के संपादन में स्थापित ''बाल भारती सीरीस'' के अन्तर्गत विविध लेखकों के द्वारा तेलुगु में रचित ऋषि-मुनियों व महोन्नत सज्ञनों की जीवनियों से संबंधित लगभग १०० पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया। इनका पाठकों ने समादर किया और इसी प्रोत्साहन से प्रेरित होकर अन्य भाषाओं में भी इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। प्रारम्भिक तौर पर इनको अंग्रेजी व हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया जा रहा है। इनके द्वारा बच्चे व जिज्ञासु पाठकों को अवश्य ही लाभ पहुँचेगा।

इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का उद्धेश्य यही है कि बच्चे पढें और बडे लोग इनका अध्ययन कर, कहानियों के रूप में इनका वर्णन करें, तद्वारा बच्चों में सृजनात्मक शक्ति को बढा दें। फल स्वरूप बच्चों को अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा निश्चय ही बचपन में ही मिलेगी।

आर. श्रीहरि
एडिटर-इन-चीफ
ति.ति.देवस्थानम्।

स्वागतम् !!!

श्रीनिवासदयोद्भूता बालानां स्फूर्तिदायिनी।
भारती जयताल्लोके भारतीयगुणोज्ज्वला।।

खण्ड-खण्डांतरों में नागरिकता के विकसित होने से पहले ही सभ्यता, संस्कार, नैतिक-धार्मिक आदर्शों के लिए भारत विख्यात है। हमारा भारत खण्ड इस पृथ्वी पर जन्म लेनेवाले हर मानव - अधर्म का विरोध करते हुए धर्माचरण में अपने जीवन को सफल बनाने के लिए भगवान की ओर कदम बढ़ाते हुए महान कीर्ति को प्राप्त करने वाला ही है। उस तरह के महात्माओं की सन्निधि हमारे सुख संतोष की निधि है। उन के जीवन आदर्श मन में रखकर व्यवहार करेंगे तो उसका प्रभाव हम पर रहता है। ''मैं भारतीय हूँ'', यहाँ पीढियों से पानेवाले रीतिरिवाज हैं। ''यह मेरा कर्तव्य है।'' इसे समझकर हर बालक और बालिका को देश सेवा के लिए समर्पित होना है।

सच पूछा जाय तो इस देश में कितने ही महानुभाव, महापुरुष, महापतिव्रताएँ तथा महावीर ने जन्म लेकर बडे होकर संस्कृति की नींव डाली है। स्वच्छ जीवन वाहिनी को हमारे पास तक प्रवाहित करवाया। अहो! हम कितने भाग्यशाली हैं! हमारे पीछे कितना उदात्त इतिहास है। अगर वे पुण्य पुरुष, महासाध्वी यहाँ जन्म नहीं लेते तो हम अपनी कहने वाली यह महत्तर संस्कृति, सभ्यता हमें कैसे प्राप्त होतीं? उन को समझना, उनके इतिहास को मनन करना तथा उनके आदर्शों को स्मरण करना भी विशेष ज्ञान देनेवाले विद्याभ्यास ही हैं। वह आगे आगे हमारी जाति के जीवन प्रवाह में कुछ सालों तक अचंचल स्फूर्ति और सौरभ को भर देता है। इसलिए 'श्रीनिवास बालभारती' का उदय हुआ। कितने ही महान लोगों को आप के सामने रख रहा है। बस आप की ही देर है।

बच्चों! आइए! आइए!
हर्षोल्लास के साथ आप का स्वागत है।

एस.बी. रघुनाथाचार्य
प्रधान संपादक

आँखे फाडकर देखने से भी न दिखनेवाला घोरांधकार है। सुदूर में कोई दिव्य कांति है। वह शमी वृक्ष जैसा है। नजदीक पहुँचने के बाद देखा तो आँखों की पलकों को भी न हिलानेवाला शिशु, उसकी चारों दिशाओं में अग्नि वलय है। कैसा विचित्र है? अहो! किस माता की कोक से जन्म लिया? नहीं नहीं। कोई मातृमूर्ति उस शिशु को अपने गोद में ले रही है। उसके बगल में शायद उसका पति खडा है। आहा! यह नन्हा बच्चा कितना प्यारा है! कोई कारणजन्म हो सकता है। भगवान श्रीकृष्ण तो नहीं है! हो सकता है!

काकर्ल लक्ष्मण भट्ट और श्रीमति एल्लम्मा का पुत्ररत्न है। ये वैश्वानराग्नि संभूत श्री कृष्णांश संभव, सुप्रसिद्ध नामधेय वल्लभाचार्य हैं।

तेलुगु माता को पैदा होकर, भागवत् सप्ताह का निर्वाह करते हुए भारत देश की कई बार पादयात्रा करनेवाला अनन्य भक्त शिरोमणि है श्री वल्लभाचार्य।। महाराजा श्री कृष्णदेवराय ने उन्हें कनकाभिषेक किया और सात हजार सोने की सिक्के भेंट के रूप में दिया तो उसमें से सिर्फ सात सिक्के लेकर बाकी सिक्कों को पण्डितों में बाँटनेवाले परम उदार स्वभावी हैं वे। रुस्तुम अली ने मथुरा के मार्ग में हिन्दू लोगों की शिखाओं को दाडी के रूप में बदलानेवाले यंत्र का इंतजाम किया तो मुसल्मानों को दाडी के स्थान पर शिखा बन जाने का यंत्र दिल्ली मार्ग में रखवानेवाले उस व्यक्ति के आत्मस्थैर्य, धर्मदीक्षा कितना अभिवंदनीय है और अनुसरणीय है।

भगवान की कृपा को परमार्थ के रूप में वर्णन करनेवाले पुष्टि की स्त्रष्टा उस आचार्य जी के सेवा भाव, त्यागनिरति को आज हम सबको आदर्श के रूप में मानना चाहिए। बस आगे पढिये।

- प्रधान संपादक

महाप्रभु वल्लभाचार्य

अकल्प कल्पद्रुम मल्पकल्पना
विकल्प जल्प प्रतिकल्प कौतुकम्।
अनल्प कल्प क्लम संप्लवप्लवं
महाप्रभूणां चरणांबुजं वृणे।।

कारणजन्म महाप्रभु

भगवद्गीता में श्री कृष्ण ने कहा कि ‘धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे’। जनता में अधर्म, अविनीति, कुतर्क, शंका और मूर्खता जब ज्यादा फैल जाते हैं, तब परमात्मा का अवतार होता है, जरूर नराकार ग्रहण करता है। अपने संदेशों से, बोधन से और आचरण के द्वारा लोगों के मन को निर्मल बनाकर उन्हें सन्मार्ग की ओर बढ़ाता है। इस प्रकार के भगवत् विभूति हर युग में जन्म लेते ही रहते हैं। श्री व्यास, गौतम बुद्ध, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य आदि महान लोग उस प्रकार के कारणजन्म थे। उसी वर्ग के अंतर्गत आते हैं महाप्रभु वल्लभाचार्य सिर्फ शुद्धाद्वैत के पुष्टि मार्ग के वैष्णव श्रीमद्वल्लाभाचार्य को महाप्रभु कहलाने की योग्यता है।

काकरवाडा में कंभंपाटि परिवार

भगवान को प्राप्त करने का अत्यंत सरल मार्ग है, पुष्टि मार्ग। इस पुष्टिमार्ग का और शुद्धाद्वैत सिद्धांत का प्रतिपादन करनेवाले श्री वल्लभाचार्य आंध्र प्रांत के थे। कंभंपाटि वंशज तथा वेलनाटि ब्राह्मण परिवार के थे। भारद्वाज गोत्रज थे। कृष्ण यजुश्शाखा अध्यायी और आपस्तंभ सूत्रज थे।

माता रेणुका देवी इनकी कुल देवी है। यह कंभंपाटि परिवार काकरवाडा नामक गांव के निवासी थे। यह गांव कृष्णा नदी के दक्षिणी किनारे पर स्थित व्योमस्तंभगिरि (आज के मंगलगिरि) के पास था। 'काकरा' शब्द का अर्थ कुछ पंडितों ने इस प्रकार श्लोक के रूप में बताया।

कं सुखं कथ्यते विज्ञैराकरः खनिरुच्यते।
सुखानामाकरत्वात् सा 'काकरे' त्यभिधीयते।।

'का' माने सुख, 'आकरा' माने निदान अर्थ है। 'काकरा' माने सुखनिदान अर्थ है। उस प्रकार के काकरवाडा में वल्लभाचार्य के पूर्वज निवास करते थे।

आप के खानदान में जन्म लेता हूँ

वल्लभाचार्य के (पूर्वज) परदादा यज्ञनारायण दीक्षित थे। वे सदाचार संपन्न, नित्य अग्निहोत्रि थे। तमिल प्रांत में प्रसिद्ध विष्णुस्वामी संप्रदाय के एक वैष्णवाचार्य ने यज्ञनारायण को 'गोपाल मंत्र' का उपदेश दिया। ''यज्ञो वै विष्णुः'' नामक श्रुति कहता है कि श्री महाविष्णु यज्ञ का स्वरूप है। अतः उन्हें प्रसन्न करने के लिए यज्ञनारायण दीक्षित ने 100 सोम यज्ञ करने की दीक्षा ली।

पहला यज्ञ खत्म होते ही श्रीकृष्ण भगवान ने दर्शन देकर यह वरदान दिया कि आप के वंशज द्वारा 100 सोम यज्ञ पूर्ण होते ही मैं आप के वंश में जन्म लूँगा। यज्ञनारायण दीक्षित ने 31 सोम यज्ञ किये। उनका बेटा गंगाधर दीक्षित ने 27 सोमयज्ञ किये। गंगाधर महापंडित थे। उन्होंने 'मीमांसा रहस्य' नामक ग्रंथ की रचना की।

गंगाधर का बेटा गणपतिभट्ट था। उन्होंने 32 सोमयज्ञ किये। ''तंत्र निग्रह'' नामक ग्रंथ की रचना की। गणपति भट्ट के पुत्र थे वल्लभ भट्ट, उन्होंने 5 सोमयज्ञ किये। इनके दो पुत्र थे। बड़े बेटे का नाम लक्ष्मणभट्ट तथा दूसरे बेटे का नाम जनार्दन भट्ट था। लक्ष्मण भट्ट ने 5 सोम यज्ञ किये।

इस प्रकार कंभंपाटि खानदान वालों ने 100 सोमयज्ञ पूर्ण किये थे। लक्ष्मण भट्ट ने 100 सोम यज्ञ खतम करके, काशी जाकर वहाँ एक लाख पच्चीस हजार लोगों को भोज कराकर अपने परदादा यज्ञनारायण दीक्षित की संकल्पना को पूरा किया। इस तरह के परम निष्ठावान और पंडितों के खानदान में वल्लभाचार्य का जन्म हुआ।

शमीवृक्ष के पास आकर मुझे ले जाओ

लक्ष्मण भट्ट ने विजयनगर राजवंश के वैष्णवाचार्य सुशर्मा की बेटियों से शादी की। जब उसकी पहली पत्नी ने दो बेटियों और एक बेटे को जन्म दिया तब उसे सन्यास लेने का विचार आया। उसी समय एक महापुरुष ने उसके पास आकर कहा कि अरे बाबा! आप के खानदान में श्री कृष्ण भगवान का अवतार होने वाला है। अतः तुम सन्यास मत लो! इतने में दूसरी पत्नी एल्लम्मा ने गर्भ धारण किया। उस समय यह अफवाह फैला गया कि काशी नगर को ध्वंस करने के लिए मुसल्मान लोग आ रहे हैं। इसके कारण काशी में बसे दक्षिण प्रांतवासी तथा अन्य अपने-अपने गांव के लिए निकले। लक्ष्मण भट्ट भी अपनी पत्नी और पुत्रों के साथ आंध्र प्रांत को रवाना

हो गये। वे मध्यप्रदेश में आज के रामपुर नामक गांव के नजदीक चंपारण्य नामक प्रदेश पहुँच गये। उस समय यातायात के साधन उपलब्ध नहीं थे। मार्ग की असुविधा और मानसिक हलचल के कारण श्रीमती एल्लम्मा को आठवें महीने में एकदिन रात को गर्भपात हो गया। आसपास घना अंधकार था। जिस शिशु को जन्म दिया, उसे मुर्दा समझकर अपनी साडी के पल्लू को फाडकर, उस मुर्दा पिंड को लपेट कर एक शमी वृक्ष के खोखले में रख कर चली गयी। वे पास के गांव में रात बिताना चाहते थे। इसलिए वे 'चोडा' नामक गांव चले गये। सबेरे-सबेरे लक्ष्मण भट्ट और एल्लम्मा दोनों को एक ही प्रकार का सपना आया। उस सपने में श्री कृष्ण भगवान ने दर्शन देकर आदेश दिया कि मैंने तो अपनी बात के अनुसार आप के खानदान में जन्म लिया। आप उस शमी पेड़ के पास आकर मुझे ले जाइए। इस स्वप्न से वे आश्चर्य चकित हो गये। कूदते दौडते वे लोग उस शमी वृक्ष के पास गये। अचरज की बात है पेड के नीचे, एक अग्निवलय के बीच में एल्लम्मा की साडी के आंचल के टुकडें पर लेट कर खेलते हुए भुवन मोहनाकार शिशु दिखाई दिया। एल्लम्मा के स्तन्य मातृभावना से भर गये। ये ही पैदा हुए श्रीकृष्ण हैं तो अग्नि कोई हानि नहीं पहुँचाएगा, सोचते सोचते उस शिशु को गोद में लिया। अग्नि देवता ने उस दंपति को कोई हानि नहीं पहुँचाया। उसी समय फूलों की बारिश होने लगी। देवताओं ने बाजे भी बजाये। चारों ओर शांत वातावरण था। इस प्रकार विक्रमशती 1535 (सन् 1478) वैशाख मास कृष्ण पक्ष एकादशी, रविवार की रात में करीब 8.30 बजे श्रीकृष्ण के मुख के अंदर रहनेवाले वैश्वानर

(अग्नि) ने लक्ष्मणभट्ट के पुत्र के रूप में जन्म लिया। अतः वल्लभाचार्य को वैश्वानर नाम से भी जाना जाता है।

लक्ष्मण भट्ट ने उस बच्चे को अपने पिता का नाम ही रखा। माता, पिता और रिश्तेदारों के लाड प्यार से बडे होकर वह बालक सचमुच 'वल्लभ' बन गया।

बाल वल्लभ की प्रतिभा और पाण्डित्य

समाज की परिस्थितियाँ सामान्य हो गयीं और शांतिपूर्ण वातावरण बन गया सोचकर लक्ष्मण भट्ट दुबारा काशी लौट गये। वे काशी में 'हनुमान घाट' में रहते थे। श्रीवल्लभ का बचपन पंडितों का निलय और पंडितों का नगर काशी में गुजरा। 5 साल की उम्र में श्री वल्लभ को (उपनयन) जनेऊ संस्कार किया गया। उस छोटी उम्र में ही वह अपने पिता के साथ विद्वत सभाओं में जाता था। कभी कभी स्वयं चला जाता था। वहाँ अपनी प्रतिभा और पांडित्य से प्रकांड पंडितों को भी आश्चर्यचकित करता था। उस उम्र में लिखा गया ''पत्रावलंबनम्'' नामक ग्रंथ द्वारा श्री वल्लभ को पंडितों से प्रशंसाएँ प्राप्त हुई। माधवेन्द्रपुरी नामक पंडित से वेदवेदांग, शास्त्र, पुराण आदि को पूर्ण रूप से श्री वल्लभ ने अभ्यास किया। उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि वेद, व्याससूत्र, भगवद्गीता और श्रीमद् भागवत, ये चार ग्रंथ ही प्रमाणिक ग्रंथ है। पंडित श्रीवल्लभ की प्रतिभा, विद्वत्ता और पांडित्य को देखकर साक्षात् सरस्वती माँ ही उस बालक के रूप में आयी है क्या? सोच कर आश्चर्य चकित होते थे। तब से श्रीवल्लभ को ''बाल सरस्वति'' उपाधि नाम मिला।

लक्ष्मण भट्ट का भगवान वेंकटेश्वर में विलीन होना

अपने 11 साल की उम्र में श्रीवल्लभ अपने माता पिता के साथ काशी से अपना गांव 'अग्रहार' के लिए निकल पड़ा। अपने पुरखों के निवास स्थान अग्रहार गांव पहुँच गया। श्री वल्लभ के पहले ही उन की प्रतिष्ठा वहाँ फैलने के कारण उस गांववालों ने बडें धूमधाम से उनका स्वागत किया। उनके चाचा जनार्दन भट्ट ने उसे एक सालिग्राम और भागवत महापुराण ग्रंथ को भेंट किया। उस समय से श्री वल्लभ ने यह नियम रखा कि हर जगह भागवत् सप्ताह कराना है। अग्रहार में रहते समय श्रीमती एल्लम्मा सात पहाड़ों के स्वामी का दर्शन कर अपने जीवन को पुनीत करना चाहती थी। तुरंत श्री वल्लभ ने अपने माता पिता के साथ वेंकटाद्रि पहुँच गये। सात पहाड़ चढ़कर आनंदनिलय में श्री वेंकटेश्वरस्वामी का दर्शन करते समय, श्री वल्लभ के पिता लक्ष्मण भट्ट भी वेंकटेश्वर स्वामी में विलीन हो गये। उन का जन्म सार्थक हो गया। आज भी तिरुमला में वराहस्वामी के मंदिर में वल्लभाचार्य जहाँ बैठते थे, यात्री उस स्थान का दर्शन करते हैं।

महाराज श्रीकृष्ण देवराय द्वारा कनकाभिषेक

श्री वल्लभ ने कुछ समय तिरुमला में रहकर भागवत् सप्ताह का निर्वहण किया। वहाँ से तुंगभद्रा नदी के किनारे स्थित विजय नगर पहुँचा। अपने मामा के घर को मुकाम बनाया।

विजयनगर राज्य पर उस समय साहित्य समरांगण सार्वभौम चक्रवर्ति श्रीकृष्णदेवराय शासन करते थे। श्रीकृष्णदेवराय ने धार्मिक

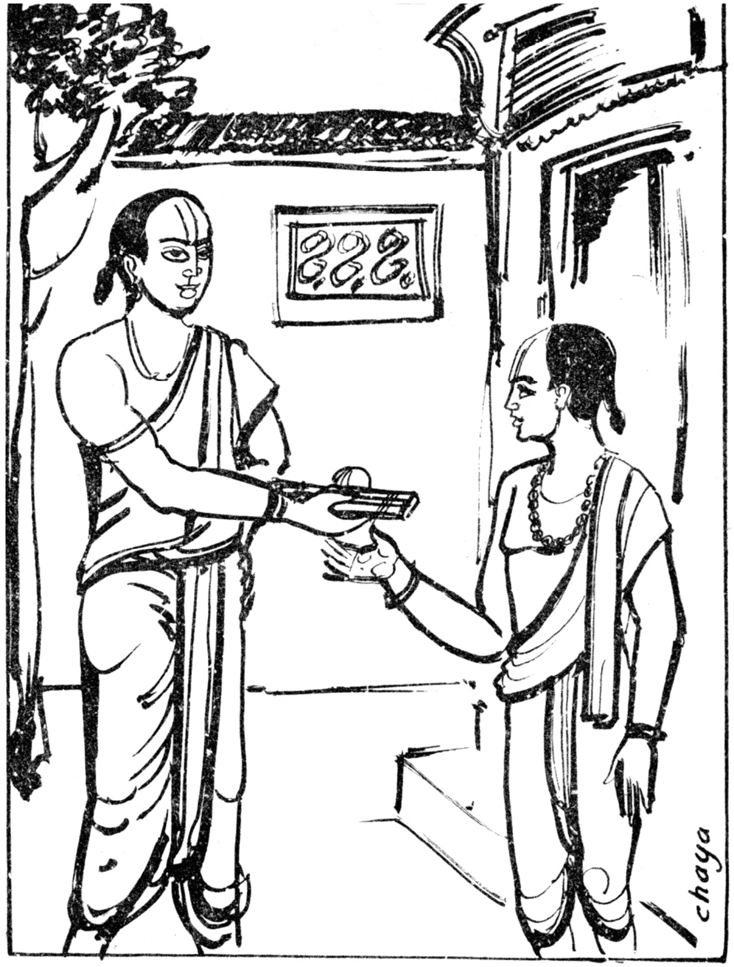

सभाओं का आयोजन किया। विभिन्न मत, भिन्न भिन्न संप्रदाय के आचार्य और महान पंडित लोग उस सभा में भाग ले कर अपने संप्रदायों के बडप्पन और वैशिष्ट्य की प्रशंसा करते हुए दूसरे संप्रदाय और मतों का खंडन करते थे। वल्लभाचार्य ने राजा को

खबर भेजा कि मैं भी उन शास्त्रों की चर्चाओं में भाग लूँगा। राजा श्रीकृष्णदेवराय ने सादर आमंत्रित किया। वल्लभ ने उस सभामें अपनी प्रतिभा और वाक् पटिमा से दूसरों के वादों का खंडन करके, अपने शुद्धाद्वैत पुष्टि मार्ग को ही एकैक सिद्धांत के रूप में प्रतिपादन किया। वे चर्चा और परिचर्चाएँ 28 दिन लगातार चलीं। उस बालक की प्रतिभा, पांडित्य और वाक्चतुरता को देखकर समस्त जनता मुग्ध हो गयी। श्रीकृष्णदेवराय ने उन्हें श्री वेदव्यास विष्णु स्वामी संप्रदाय समुद्धारसंभूत श्री पुरुषोत्तम वदनावतार सर्वाम्नाय संचार वैष्णवाम्नाय प्राचुर्य प्रकार श्रीबिल्व मंगलार्पित साम्राज्यासना खण्ड भूमण्डलाचार्यवर्य जगद्गुरु महाप्रभु श्रीमदाचार्यः नाम से और आचार्य चक्र चूडामणि उपाधि देकर कनकाभिषेक किया। श्रीवल्लभाचार्य ने आदेश दिया कि उस कनकाभिषेक द्वारा प्राप्त संपूर्ण धनको पण्डितों में बाँट दो। उन को पालकी में बिठाकर जुलूस निकालते हुए घर भेजने की राजा की इच्छा थी। पंरतु उसे नकारकर वे पैदल चलकर अपने मामा के घर पहुँचे। अपनी यात्राओं में उन्होंने कभी भी किसी भी गाड़ी का प्रयोग नहीं किया। उन की सारी यात्राएँ पाद यात्राएँ ही थीं।

श्रीकृष्णदेवराय ने अपने लोगों के साथ वल्लभाचार्य के पास दीक्षा पाकर पुष्टिमार्ग वैष्णव सिद्धांत को स्वीकारा। उस समय में वहीं स्थित श्री विष्णुस्वामी मताचार्य और श्री बिल्व मंगलाचार्य दोनों ने अपने संप्रदाय के लिए भी श्री वल्लभाचार्य को ही आचार्य के रूप में स्वीकार किया।

सात सिक्के पर्याप्त है

श्री वल्लभाचार्य से दीक्षा प्राप्त करने के बाद श्रीकृष्णदेवराय ने उन्हें 7000 सोने की सिक्कों को गुरुदक्षिणा के रूप में समर्पित किया। उनमें से आचार्य जी सिर्फ सात (7) सिक्कों को लेकर, बाकी सिक्कों को वही बाँटकर चला गया। बाद में ''श्रीनाथद्वारा'' मंदिर की स्वयंभू मूर्ति गोवर्धन का उन सिक्कों से सोने का कटिसूत्र बनाया गया कहा जाता है। और कुछ लोग कहते हैं कि द्वापर युग में नंद के गायों में से एक गाय को खरीदने के लिए खर्चा किया गया। उस गाय की संतान को आज भी ''नाथद्वारा'' में देख सकते हैं।

प्रचार मात्राएँ

विजयनगर से श्री वल्लभाचार्य ने श्रीकृष्ण भक्ति को तथा पुष्टि मार्ग के प्रचार को शुरू करके भारत देश की यात्रा की। सबसे पहले भगवान श्रीराम से पुनीत पंपा सरोवर के किनारे कुछ समय बिताया। वहाँ भागवत् सप्ताह करके प्रवचन भी दिया। कृष्णदास नामक क्षत्रिय को दीक्षा दी। वहाँ से ऋष्यमूक, किष्किंधा आदि पवित्र स्थानों का दर्शन कर के कंची, चिदंबरं, रामेश्वर, तोताद्रि और पद्मनाभं गये। पद्मनाभं में राजमहिषी को प्रेत की पीडा से विमुक्त कर दिया।

वल्लभ को वाक्पति उपाधि

इस यात्रा में एक जगह रविनाथ वैदिकी नामक पंडित वल्लभाचार्य के वेदविज्ञान की परीक्षा लेने आये। वे वेद मंत्रों को एक को छोड़कर

एक पढ़ने लगे। श्री वल्लभाचार्य ने आखिरी मंत्र से शुरू करके पहले मंत्र तक पढ़कर सुनाया। बाद में वल्लभाचार्य से कुछ प्रश्न पूछा गया। उनके सही उत्तर देने पर संतुष्ट हो कर वल्लभाचार्य को 'वाक्पति' उपाधि देकर रविनाथ ने सम्मानित किया।

पुष्पदंताचार्य, प्रतिबिंबवाद के अन्य आचार्य पंडित वल्लभाचार्य की वाक् चतुरता और पटुता के सामने खडे नहीं हो सके। बाद में उनके शिष्य बन गये।

वहाँ से उत्तर की ओर यात्रा करके गोकर्णं, उडिपि आदि क्षेत्रों का दर्शन करके गुजरात में स्थित नर्मदा नदी की परिक्रमा करके सिद्धपुर, कुंडिनपुरं, वटेश्वरं आदि क्षेत्रों को दर्शन किया। वहाँ से राजस्थान के पुष्कर पहुँच गये। उसके बाद उत्तराखंड के गंगोत्री, बदरीनाथ, केदारनाथ आदि पुण्यक्षेत्रों का दर्शन करके 9 साल के बाद काशी पहुँचे।

मेरे पास आकर सेवा करो

जब वल्लभाचार्य चंपारण्य प्रांत में दर्शन दिया तब वृंदावन के गोवर्धनगिरि पर एक अद्भुत घटना घटी। गोवर्धन गिरि पर जो गिरिधारी की मूर्ति दबकर रह गयी थी। उस मूर्ति का मुख बाहर निकल कर आया। उसी रूप में वह मूर्ति 15 साल तक पूजा आदि ग्रहण करती रही।

विक्रमी संवत 1549 फालगुण शुद्ध एकादशी गुरुवार के दिन गोवर्धन पर्वत पर निकला हुआ श्रीनाथ ने वल्लभाचार्य के सपने में आकर आदेश दिया कि अपने पास आकर सेवा करो। तुरंत वे वहाँ से मथुरानगर जाकर 'उजागर चौबे' के घर पहुँचे। वहाँ रहने लगे। बाद में गोवर्धन गिरि जाकर स्वामी का मुख दर्शन करने गया तो स्वामी की मूर्ति ने पूरी तरह बाहर आकर वल्लभ का आलिंगन किया। वल्लभाचार्य ने स्वामी की आज्ञा के अनुसार पहाड़ पर एक छोटे मंदिर का निर्माण कराया और श्रीनाथ की मूर्ति की प्रतिष्ठा करके नित्य सेवा कार्य का इंतजाम किया। इस प्रकार वल्लभाचार्य द्वारा प्रतिष्ठित मूर्ति आज राजस्थान के उदयपुर के पास नाथद्वारा में देखा जा सकता है। पूजा आदि की नित्य सेवा कार्य हो रहे है। आज भी वल्लभाचार्य के वंशज गोस्वामी लोग ही वहाँ धर्मकर्ताओं के रूप में हैं। हमारे देश में तिरुपति के बाद अतिसंपन्न देवस्थान है।

यंत्र के लिए प्रतियंत्र

जब वल्लभाचार्य मथुरा में रुके हुए थे, तब एक विचित्र घटना घटी। मथुरा को जानेवाले रास्ते में सिकंदर लोदी के सेनापति रुस्तुमअली ने एक विचित्र यंत्र को रखा। उस यंत्र के कारण उस रास्ते से जानेवाले हिन्दुओं की चोटी दाडी के रूप में परिवर्तन होती थी। कुछ हिंदू लोगों ने जाकर महाप्रभू वल्लभाचार्य को इस के बारे में शिकायत की। तुरंत अपने शिष्य को बुलाकर दिल्ली जानेवाले रास्ते में दूसरे यंत्र को रखवाया। इस यंत्र की महिमा के कारण उस रास्ते से जानेवाले मुसल्मान लोगों की दाडी चोटी के रूप में बदलती थी। इस को जान कर सिकंदर लोदी ने अपने मंत्री रुस्तुमअली को डांटकर, उस यंत्र को हटवाया। वल्लभाचार्य के शिष्य ने भी अपने द्वारा स्थापित यंत्र को हटाया।

बलराम-कृष्ण का वरदान

श्रीनाथ-गोवर्धन गिरिधारी कृष्ण का मंदिर निर्माण कराने के बाद, वल्लभाचार्य ने गोवर्धन पर्वत की चारों ओर सात कोस दूर परिक्रमा और ब्रजमंडल (वृंदावनं) की चारों ओर 84 कोस दूर की परिक्रमा की। उनकी भक्ति और निष्ठा से प्रसन्न होकर बलराम और श्रीकृष्ण ने इन्हें वरदान दिया कि हम आप के घर पुत्रों के रूप में जन्म लेंगे। उसके बाद सभी वैष्णवों के लिए गोवर्धन गिरि और ब्रजमंडल की परिक्रमा का नियम बन गया।

कालक्रम में वल्लभाचार्य को गोपीनाथ और विट्ठलनाथ नामक दो पुत्र पैदा हुए। वल्लभ संप्रदाय के लोग गोपीनाथ और विट्ठलनाथ को बलराम और श्रीकृष्ण के अवतार के रूप में मानते हैं।

ब्रह्म से संबंधित मंत्रोपदेश

गोकुल में रहते समय वल्लभाचार्य यमुना नदी के किनारे गोविंद घाट को पड़ाव बनाया। श्रावण शुक्ल एकादशी के दिन उनका मन चिंता ग्रस्त हो गया। घर में रह नहीं पाये। यमुना नदी के किनारे जाकर बैठ गये। समस्त दोषों से युक्तजीव को, गुणों की निधि पुरुषोत्तम के बीच संबंध कैसे जुडेगा? इस पर बहुत विचार विमर्श किया। उनको आधी रात तक नींद नहीं आई। आधी रात बीत गई। कोटि मन्मथों का सुंदराकार श्रीकृष्ण भगवान उनके सामने प्रकट हुए। आत्मसमर्पण सहित ब्रह्म संबंध मंत्र का उपदेश दिया। जीव के उद्धार के लिए व्यथित होनेवाले आचार्य को श्रीकृष्ण भगवान ने इस प्रकार आदेश दिया कि अगर तुम ने शरणागति

पूर्वक आत्मसमर्पण मंत्र का किसी को उपदेश दिया तो, उसी क्षण उनके जन्म जन्मांतर पापों का नाश होकर वे पवित्र हो जाएँगे। तब उनको मेरे साथ संबंध रखने की अर्हता मिलेगी। इस प्रकार तुम से ब्रह्म संबंध मंत्रोपदेश पानेवाले मेरे भक्त बनकर मेरी सेवा करने की अर्हता पाएँगे। वे मेरी कृपा को प्राप्त कर सकते हैं।

पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के आदेश को अति आनंद से सिर आँखो पर लेकर श्री वल्लभाचार्य ने तुरंत वहीं के वहीं केसर के साथ पवित्रं को स्वामी को अर्पण किया और मिश्री को नैवेद्य के रूप में समर्पण किया। उसके दूसरे दिन भगवदनुग्रह को ही प्रधान अंग के रूपमें रखनेवाले पुष्टि मार्ग सिद्धांत के अनुसार ब्रह्म संबंध दीक्षा देने लगे। सबसे पहले अपने प्रियतम शिष्य दामोदर दास को ब्रह्म संबंध दीक्षा दी। दामोदर दास ने अपने गुरु वल्लभाचार्य को पवित्र धारण कराकर मिश्री को नैवेद्य के रूपमें दिया। उसके बाद वे छोटे बडे का भेदभाव किये बिना दैवांश से युक्त जीवों को ब्रह्म संबंध दीक्षा देने लगे।

अतः इस ब्रह्म संबंध दीक्षा के कारण श्रावण मास में आनेवाली शुद्ध एकादाशी, द्वादशी को श्रीवैष्णव अत्यंत पवित्र गुरु पर्व के रूप में मानते हैं।

महामंत्रार्थ

ब्रह्म संबंध दीक्षा लेते समय हाथ में तुलसी दल रखकर, उस दल को गवाह के रूप में मानकर महामंत्र का उच्चारण करना है। उस महामंत्र का भावार्थ इस प्रकार हैः-

हे परमात्मा! तुम से अलग होकर कितने युगों से जन्म-मरण चक्र में पडकर तडप रहा हूँ। कितने ही जन्म पाकर कितने ही कष्टों को झेला! हर जन्म में भी शिकार बन रहा हूँ। इस पारिवारिक बंधनों के मोह के कारण तुम से मिलने की तीव्र इच्छा, उससे प्राप्त होनेवाली आंनदानुभूति को भूल रहा हूँ। मैं इस प्रकार से अनपढ़ और दुष्ट हूँ। तुम षड्गुणों के धनी हो। अलौकिक धर्म से शोभित हो। संयोग-वियोग रस स्वरूप हो। गोपी जन वल्लभ हो। मुझ में स्थित ममता-अहंकार, देहेन्द्रिय, प्राण अंतःकरण, उनके गुण, पाप-पुण्य ये सब, हे भगवान! तुम्हारे चरण कमलों के समक्ष अर्पित कर रहा हूँ। मेरी आत्मा को ही तुम्हें समर्पण कर रहा हूँ। मैं तुम्हारा दास हूँ। हे प्रभो! हे कृष्ण! मैं तुम्हारा हूँ। समस्त चीजों को छोड़कर तुम्हारे चरणों की शरण पाने की इच्छा है। मुझे स्वीकार करो।

यह ब्रह्म संबंध मंत्र आत्मदीक्षा होने के कारण शारीरिक दीक्षाओं से महान है। इस दीक्षा को ग्रहण करनेवाले भक्त को किसी भी प्रकार का दोष नहीं लगता।

इस महामंत्र के आगे और अंत में अष्टाक्षर मंत्र का पठन करना है। ''श्रीकृष्ण शरणं मम'' ही वह अष्टाक्षर मंत्र है। इस मंत्र की अर्थ सहित व्याख्या इस प्रकार दी गयी -

श्री : सौभाग्य लक्ष्मी प्रदायिनी, राजपूजन प्राप्त होता है।
कृ : पापों का नाश करता है।
ष्ण : त्रिविध दुःखों का नाश करता है। (त्रिविध दुःख : तीन प्रकार के बंधन-पत्नी, पुत्र तथा धन का। अभ्यास करते समय आनेवाले आध्यात्मिक, आधि दैविक तथा आधि भौतिक दुखों को त्रिविध दुःख कहते हैं।)

श : जन्म-मरण दुःखों को हटाता है।
र : परमात्मा से संबंधित तत्वज्ञान देता है।
णं : श्रीकृष्ण के प्रति दृढ़ भक्ति देता है।
म : परमात्मा की सेवा की अर्हता देकर गुरु के प्रति प्रेमानुराग बढ़ाता है।
म : प्रभु में विलीन कराकर, पुनर्जन्म रहित करता है।

पूरी में सर्वधर्म महासभा

वल्लभाचार्य ने दूसरी बार देश की यात्रा के दौरान जगह-जगह पर भागवत सप्ताह कराकर प्रवचन दिया। भक्तों को ब्रह्म संबंध दीक्षा देकर, अष्टाक्षरी मंत्रोपदेश भी देते थे। उन्होंने पूरी जगन्नाथ में सर्वधर्म सभा में दूसरों के सिद्धांतों का खण्डन करके महत्व का निर्विवाद रूप से प्रतिपादित किया।

एकं शास्त्रं देवकीपुत्रगीतं
एको देवो देवकीपुत्र एव।
मंत्रोप्येकस्तस्य नामानि यानि
कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा।।

भगवद् गीता एक ही परमशास्त्र है। देवकी पुत्र ही परम तत्व है। श्रीकृष्ण नाम ही परम मंत्र है। उनकी सेवा ही श्रेष्ठ कर्म है कहकर प्रतिपादित किया। उपरोक्त श्लोक को परमात्मा श्री जगन्नाथ ने ही एक पत्ते पर लिखकर सदस्यों के सामने डाला और वल्लभाचार्य द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत का अनुमोदन किया।

विट्ठलदेवता का आदेश

इस प्रकार वल्लभाचार्य ने पैदलयात्रा से ही पूरे देश भर में भ्रमण करके शुद्धाद्वैत सिद्धांत को और पुष्टि मार्ग की भक्ति पद्धति का प्रचार किया। उनके प्रधान शिष्य दामोदर दास, कृष्ण दास, वासुदेव दास आदि मात्र ही (उन के साथ) रहते थे।

दूसरी बार यात्रा कार्यक्रम में पंढ़रपुर के चंद्रभागा नदी के किनारे पर थे। उस समय विट्ठल देवता ने उन्हें शादी करने का आदेश दिया। यात्रा खतम करके काशी पहुँचने के बाद देवभट्ट की पुत्री महालक्ष्मी से वल्लभाचार्य ने शादी की।

तीसरी तीर्थयात्रा

विवाह के बाद वल्लभाचार्य ने पत्नी समेत तीसरी बार देशाटन के लिए निकला। हर दिन कम से कम 12 मी. पैदल चलते थे। बीच

बीच में जहाँ भी रुकते थे, वहाँ भागवत् सप्ताह का आयोजन और प्रवचन देते थे। भक्तों को ब्रह्म संबंध दीक्षा देकर अष्टाक्षरी मंत्रोपदेश करते थे। शास्त्रों की चर्चाओं में भाग लेते हुए भगवत् सेवा में समय बिताते थे।

प्रभुजी की बैठक

इस प्रकार तीसरी बार की यात्रा खतम करके आने के बाद वल्लभाचार्य ने करीब 22 साल अडेल् (अलकापुरं) 'चरणाट्', वृंदावन नामक गांवों में समय बिताया। इन तीनों गांवों में से अडेल गांव में ज्यादा समय बिताया। यह यमुना नदी के दक्षिण किनारे पर तथा प्रयाग के त्रिवेणी संगम के पास स्थित है। आज भी वहाँ पुष्टि मार्ग संप्रदाय का मठ है।

अपने देश के पर्यटन के संदर्भ में उन्होंने 84 प्रदेशों में भागवत् सप्ताह किया। माने उन प्रदेशों में एक हफ्ते से ज्यादा दिन वहाँ रहे। वे प्रदेश 'प्रभुजी की बैठक' (जिस स्थान में प्रभुजी रहते है) कहलाते हैं।

हमारे तेलुगु प्रांत में मंगलगिरि तथा तिरुपति पुण्य क्षेत्रों में 'प्रभुजी की बैठक' नाम से वल्लभ संप्रदाय के मठ हैं।

वल्लभाचार्य एकांत स्थान में बैठकर ग्रंथ रचना करते थे। शास्त्र पुराणों में स्थित गूढार्थ का विवरण देकर, श्री कृष्ण भक्ति की प्राप्ति का मार्ग और उसके माधुर्य को बताने के लिए उन्होंने 84 ग्रंथों की रचना की। उनके शिष्यों में भी 84 लोग ने प्रधान वैष्णव भक्तों के रूप में प्रसिद्धि पाई।

पुष्टि मार्ग क्या है?

भगवान को पाने के लिए पुष्टि भक्ति अति आसान उपाय और साधन है कहकर उपदेश दिया गया। पुष्टि का अर्थ है भगवदनुग्रह 'पोषणं तदनुग्रहः' कहकर श्रीमद्भागवत में बताया गया। पुष्टि आत्म सुख का साधन है पुष्टि कहलानेवाले भगवान की कृपा ही पृष्टिमार्ग भक्ति का प्रधान तत्व है।

पुष्टिजीवों की विशिष्टता

विश्व में जीव तीन प्रकार के है- वे है - मर्यादा जीव, प्रवाह जीव (स्वतंत्रजीव) और पुष्टि जीव। वेद और शास्त्रों के नियमानुसार व्यवहार करने वाले मर्यादा जीव है। कोई नियम के बंधन में न रहे, इच्छानुसार स्वतंत्र रूप से जीवन बितानेवाले प्रवाह जीव हैं। भगवान की कृपा के पात्र तथा श्रीकृष्ण की भक्ति में जीवन बिताने वाले जीव पुष्टिजीव हैं। पुष्टिजीव अन्य जीवों से श्रेष्ठ हैं। अष्टाक्षर मंत्रोपदेश पाकर, नामस्मरण करने से और ब्रह्म संबंध दीक्षा पाने से भगवान की कृपा प्राप्त होती है। आत्म समर्पण, प्रेम और अनुरागों के साथ भगवान की सेवा करने से भगवान की कृपा के पात्र बन सकते हैं।

1567 (विक्रमी शती) आश्वयुज कृष्णद्वादशी के दिन 'अडेल्' गांव में वल्लभाचार्य के प्रथम पुत्र श्री गोपीनाथ का अवतार हुआ। उस के बाद 1572 (वि.श.) पुष्य मास कृष्ण नवमी शुक्रवार के दिन 'चरणाट्' में श्रीविठ्ठलनाथ का उदय हुआ। पहले ही कहा गया है कि इन दोनों को बलराम और श्रीकृष्ण के अवतारों के रूप में मानते हैं।

गोपीनाथ की कठिन दीक्षा

गोपीनाथ श्रीमद्भागवत् पुराण का पारायण खत्म किये बिना भोजन नहीं करता था। अकसर तीन-चार दिन के बाद ही भोजन करने का समय मिलता था। फिर भी नियम भंग नहीं करते थे। इस प्रकार भोजन करने के लिए रुकावट आते देखकर वल्लभाचार्य ने भागवत् सार संग्रह को 'श्री पुरुषोत्तम सहस्रनाम' नामक ग्रंथ की रचना की। उन्होंने कहा कि इस ग्रंथ का पारायण करने से भागवत् का फल प्राप्त होगा। तब से गोपीनाथ सहस्रनाम पारायण करके भोजन करते थे।

गोपीनाथ का बलराम में विलीन होना

वल्लभाचार्य के बाद आचार्य पीठ के अधिष्ठाता गोपीनाथ अत्यंत महिमामंडित व्यक्ति थे। वे श्री गोवर्धननाथ के नित्यपूजाकैंकर्य को अत्यंत समर्थता के साथ निर्वहण करते थे। उन्होंने गुजरात, उडिसा और दक्षिण भारत देश की यात्रा करके पृष्टिमार्ग को प्रचार किया। उन्होंने अपने जीवन का ज्यादा समय पूरीजगन्नाथ में बिताया। वहाँ जगन्नाथ मंदिर की पूजा पद्धति को पुष्टि मार्ग की पद्धतियों के अनुसार क्रमबद्ध किया। जब वे पूरीजगन्नाथ में रहते थे, उस समय एक दिन सारे भक्तों के सामने बलराम की मूर्ति में विलीन हो गये।

गोपीनाथ को एक ही बेटा था। उसका नाम पुरुषोत्तम था। पुरुषोत्तम छोटी उम्र में ही सन्यास ग्रहण करने से वंश उसके साथ ही रुक गया।

विट्ठलनाथ-भक्ति साहित्य का विकास

गोपीनाथ के बाद वल्लभाचार्य के कनिष्ठ पुत्र विट्ठलनाथ ने आचार्य पीठ ग्रहण किया। विट्ठलनाथ के समय में पुष्टिमार्ग के भक्ति संप्रदाय ने दिन दूना रात चौगुना विस्तार पाया।

विट्ठलनाथ को संगीत तथा चित्रकला की जानकारी होने से पुष्टिमार्ग के भगवत् सेवा कार्यक्रम में संगीत और चित्रकला को विशेष स्थान प्राप्त हुआ। पुष्टिमार्ग के सिद्धांत ने केवल दार्शनिक धार्मिक क्षेत्रों तक सीमित न रहकर साहित्य के क्षेत्र में भी अपना स्थान बनाया। उन्होंने अपने पिताजी के चार शिष्य तथा अपने चार शिष्य कुल आठ कवियों को 'अष्टछाप' नाम देकर उन के संकीर्तना साहित्य को एक अच्छा साकार रूप दिया। 'अष्टसखा' नाम से जाने जानेवाले इन कवियों में सूरदास और नंददास प्रमुख हैं। हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल के कृष्ण भक्ति साहित्य का श्रीगणेश करनेवाले वल्लभाचार्य है तो उस का विकास तथा विस्तार करनेवाले हैं विट्ठलनाथ।

शाहंशाह अकबर द्वारा 'गोस्वामी' उपाधि

उस समय के उत्तर भारत के राजा तथा महाराजाओं ने विट्ठलनाथ के शिष्य बनकर अपने जीवन को धन्य बनाया। शाहंशाह अकबर भी उनके प्रति भक्ति और श्रद्धा का भाव रखते थे।

मथुरा, वृंदावन के परिसरों में गोवध के निषेध के लिए अकबर चक्रवर्ती ने फरमाना जारी किया। गोकुलं, महावनं, जतीपूरा आदि

गाँवों को विट्ठलनाथ के खानदान को दान के रूप में दिया। अकबर द्वारा जारी की गई इस दान के दस्तावेज, फरमाना आदि अब भी श्रीनाथद्वारा में 'तिलकायत' नामक व्यक्ति के पास है। अकबर ने विट्ठलनाथ को गोस्वामी नामक उपाधि देकर सत्कार किया। अपने पिता द्वारा शुरु की गई कई कार्यों को विट्ठलनाथ ने पूरा किया।

आप के दर्शन जैसे!

एक बार गोकुल की ठकुरानी घाट में गोस्वामी विट्ठलनाथ संध्यावंदन कर रहे थे। तब अकबर बीरबल के साथ वहाँ आया। अकबर ने विट्ठलनाथ से पूछा कि परमात्मा का दर्शन कैसे होता है? (कैसे प्राप्त होता है) विट्ठलनाथ ने जवाब दिया कि आप ने आकर जैसे दर्शन दिया; वैसे। अपने समाधान का विस्तार देते हुए विट्ठलनाथ ने कहा कि अगर मैं खुद आप के दर्शन के लिए आता तो, आप को पसंद आया तो, दरबार में या अंतःपुर में बुलाते। नहीं तो फिलहाल हमारे पास समय नहीं बाद में आने के लिए कहते। दर्शन नहीं मिलता। परंतु अब अपने आप ही यहाँ आगये। इसलिए कोई आपत्ति नहीं है। उसी प्रकार जीव को भी लाखों बार प्रयास करने से भी भगवत्सान्निध्य साध्य नहीं होता। परंतु भगवान ही मानता है तो क्षण में जीव का उद्धार करता है। इसलिए जीव को अपने आचरण, भगवत् सेवा आदि से भगवदनुग्रह को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। विट्ठलनाथ का विवरण पुष्टिमार्ग की भक्ति के अनुरूप है। इस विवरण को सुनकर अकबर प्रसन्न होकर विट्ठलनाथ को प्रणाम करके चले गये।

अष्टछाप में सूरदास

गोस्वामी विट्ठलनाथ के शिष्यों में 252 शिष्य प्रमुख हैं। उनमें हिन्दू धर्म के लोग ही नहीं मुसल्मान, पठान और हरिजन भी थे। विट्ठलनाथ ने सभी जातिवालों को और स्त्रियों को भी भगवत् सेवा करने का अधिकार दिया। 'अष्टछाप' कवियों में सूरदास हिन्दी साहित्य रूपी आकाश में सूर्य हैं। वे अंधे थे। श्रीकृष्ण लीलाओं का वर्णन करते हुए जो कीर्तन रचे गये, उन को सुनते हैं तो भक्ति पारवश्यता में शरीर रोमांचित हो जाता है।

विट्ठलनाथ के बाद उन के सात बेटे सप्ताचार्य के रूप में सप्तपीठों के अधीश्वर बनकर प्रसिद्ध हुए। आज भारत देश में जो आचार्य प्रमुख पुष्टिमार्ग का प्रचार कर रहे हैं सब इनके संतान हैं। वे अब भी तेलुगु प्रांत की कन्याओं से ही शादी करते हैं।

श्लोकों से शिक्षा उपदेश

वल्लभाचार्य को अपने 52 साल में एहसास हुआ कि अपने अवतार लेने का कार्य पूर्ण हो चुका है। तब उन्होंने सन्यास स्वीकार करके 'पूर्णानंद' नाम को ग्रहण किया। इहलोक में परमात्मा में लीन होने का निर्णय लिया। त्रिदंड सन्यास दीक्षा के साथ मौनव्रत रखकर 18 दिन पैदल चलकर प्रयाग से काशी के हनुमान घाट पहुँच गये। वहाँ 7 दिन कौपीन मात्र ही पहनकर रहे थे। आषाढ़ शुद्ध विदिया के दिन अपराह्न के समय गंगानदी के पास गये, प्रवाह के बीच नाभी तक गहरे पानी में खडे हो गये। उस समय उनके पुत्र

और शिष्य ने दुख से पूछा कि हमारी स्थिति क्या है? तब उन्होंने शिक्षा में निम्नलिखित पांच श्लोक बताये।

यदा बहिर्मुखा यूयं भविष्यथ कथञ्चन ।
तदा कालप्रवाहस्था देहचित्तादयोप्युत ।। 1

सर्वथा भक्षयिष्यन्ति युष्मानिति मतिर्मम ।
न लौकिकः प्रभुः कृष्णो मनुते नैव लौकिकम् ॥ 2

भावस्तत्राप्यस्मदीयः सर्वस्वं चैहिकश्च सः ।
परलोकश्च तेनायं सर्वभावेन सर्वथा ॥ 3

सेव्यः स एव गोपीशो विधास्यत्यखिलं हि नः ।
मयि चेदस्ति विश्वासः श्रीगोपीजनवल्लभे ॥ 4

तदा कृतार्था यूयं हि शोचनीयं न कर्हिचित् ।
मुक्तिर्हित्वान्यथारूपं स्वरूपेण व्यवस्थितिः ॥ 5

अगर आप बहिर्मुख हैं, लौकिक व्यवहार में सहभागी हैं, काल प्रवाह में डूबकर जानेवाले हैं तो आप को देह और चित्त पूरी तरह छा जाता है। अर्थात् आप शरीर और चित्त के वशीभूत होकर इंद्रियों के दास बन जाएँगे। प्रभू श्रीकृष्ण लौकिक नहीं है, और मन भी लौकिक नही हैं। मेरा विश्वास और अभिप्राय है कि सर्व की भावना सर्वथा, सब कुछ इहलोक और परलोक सब श्रीकृष्ण के रूप में ही लगना चाहिए। सारे विश्व में गोपेश्वर, गोपीजन वल्लभ श्रीकृष्ण ही अकेला सेवन करने योग्य हैं। उस तरह आप करेंगे तो पचताने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इतर रूपों को छोडकर इस स्वरूप के साथ रहना ही मुक्ति है।

सूर्य प्रकाश में वल्लभ का लीन होना

इस प्रकार वल्लभाचार्य आखिरी बार अपने पुत्रों और शिष्यों को उपदेश देकर सूर्य की ओर तीक्षण दृष्टि से देखते हुए खडे हो

गए। इतने में अचानक सूर्यमंडल से एक किरण पुंज जमीन पर आया। वहाँ सब लोगो के सामने श्रीवल्लभाचार्य उसमें लीन हो गये। पुष्टि मार्ग संप्रदाय में इस घटना को 'आसुर व्यामोह' बोलते हैं।

इस अद्भुत घटना को प्रत्यक्ष रूप से देखनेवालों में विल्सन नामक एक विदेशी भी था। उसने अपनी डाइरी में इस प्रकार लिखा हिन्दुओं के प्रधान तीर्थस्थान (बनारस) काशी में गंगा नदी के बीच में महा तेजस्वी श्री वल्लभ नामक हिन्दू साधू पानी में खडा रहा। इतने में आकाश से एक बडा प्रकाश पुंज नीचे उतर कर आया। वह साधु उस प्रकाश पुंज में लीन हो गया। उस समय में आकाश से गंगा नदी के पानी तक एक प्रकाश स्तंभ जैसा निर्माण हो गया। बाद में कुछ समय तक वहाँ के लोग उस प्रकाश स्तंभ को देखते हुए खडे हो गये। सच में यह एक अद्भुत और विचित्र घटना है।

इसके बारे में एक छोटी सी किताब के रूप में अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित किया गया। वह पुस्तिका इंग्लैंड से प्रकाशित हुई।

अनर्थ का मूल कारण अंहकार और अभिमान

वल्लभाचार्य ने उपदेश दिया कि भगवान श्रीकृष्ण ही परब्रह्म और पुरुषोत्तम हैं। इसी अनन्य भाव से उन की सेवा करने में ही सर्व जीवों के लिए सभी तरह से मंगलकारी होगा। उनके द्वारा प्रतिपादित शुद्धाद्वैत संप्रदाय में पुष्टिमार्ग की भक्ति के मार्ग में श्रीकृष्ण का शरण पाकर उन्हें समस्त चीजों का समर्पण कर उनकी सेवा करना ही भक्ति का मुख्य लक्ष्य है।

जीव भी प्रभु का ही अंश है। उस प्रभु से दूर रहने के कारण जीव कितनी बाधाएँ और कितने दुःखों का शिकार बन रहा है। इसलिए सर्व दुखों के निवारण के लिए श्रीकृष्ण शरण ही एकैक साधन है। अंहकार और अभिमान ये दोनों सभी दोषों के मूल कारण हैं। अति नम्र भावना से श्रीकृष्ण ही मेरे शरण्य हैं श्रीकृष्ण ही मेरे रक्षक हैं श्रीकृष्ण ही मेरे आश्रय हैं याद करते हैं तो अहंकार अभिमान की कोई गुंजाइष नहीं रहती। अतः वल्लभाचार्य ने इस प्रकार कहाः-

यद्दैन्यं त्वत्कृपाहेतुर्नतदस्ति ममाण्वपि।
तां कृपां कुरु राधेश! यया ते दैन्यमाप्नुयाम् ॥

(हे राधेशा! तुम्हारी कृपा की हेतु है दीनता। वह मुझ में अणुमात्र भी नहीं है। इसलिए मुझ में दीनता भाव होने की कृपा दृष्टि रखे।)

अपकार करने वाले को भी सहायता करना

वैष्णवों को अर्थात् सभी भक्तों को वल्लभाचार्य ने इस प्रकार उपदेश दिया कि श्रीकृष्ण के सिवा किसी का आश्रय मत लो। भगवान को (समर्पण) निवेदन किये बिना कोई भी चीज स्वीकार मत करो। व्यर्थ बातें मत करो। दुष्टों का सांगत्य छोड दो। माता पिता के प्रति विनम्र व्यवहार करों। अपने इंद्रियों को वश में रखो। गाय की सेवा करो, अपकार करनेवाले की भी सहायता करो। समस्त जीवों के प्रति दया रखो और औचित्य के साथ व्यवहार करो।

नयी परिभाषा

चतुर्विध परुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की परिभाषा नये रूप में श्रीवल्लभाचार्य ने इस प्रकार दी श्रीकृष्ण की सेवा कार्य ही मानव धर्म है। श्री हरि लीलाओं का अनुभव करना ही अर्थ है। भगवत् दर्शन या भगवान से मित्रता की चाहत ही काम है। भगवान में विलीन होना ही मोक्ष है।

प्रसिद्ध ग्रंथ

वल्लभाचार्य ने ब्रह्मसूत्रों पर 'अणुभाष्यम्', 'तत्त्वार्थदीपिका' नामक ग्रंथों की रचना करके ब्रह्म सत्य है, जगत् भी सत्य है, जीव ब्रह्म का ही अंश मात्र है कहकर निरूपित किया। उनके द्वारा रचे गये 84 ग्रंथों में बालबोध, सिद्धांत रहस्यम्, विवेक धैर्याश्रयनिरुपणम्, भक्तिवर्धिनि, निरोध लक्षणम् आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

इस प्रकार अपना सारा जीवन भगवत् सेवा के लिए अर्पित करके, मानव सेवा तथा समस्त चराचर जगत सेवा ही माधव सेवा मानकर उसका आचरण करके दिखानेवाले श्री वल्लभाचार्य का जीवन हम सबके लिए आदर्शप्राय है।

श्रीकृष्ण शरणाष्टकम्

सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वतः ।
पापपीनस्य दीनस्य श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ 1

संसारसुखसंप्राप्ति सन्मुखस्य विशेषतः।
बहिर्मुखस्य सततं श्रीकृष्णः शरणं मम॥ 2

सदा विषयकामस्य देहारामस्य सर्वथा।
दुष्टस्वभाववामस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।। 3

संसारसर्पदष्टस्य धर्मभ्रष्टस्य दुर्मतेः।
लौकिकप्राप्तिकष्टस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।। 4

विस्मृतस्वीयधर्मस्य कर्ममोहितचेतसः।
स्वरूपज्ञानशून्यस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।। 5

संसारसिन्धुमग्नस्य भग्नभावस्य दुष्कृतेः।
दुर्भावलग्नमनसः श्रीकृष्णः शरणं मम।। 6

विवेकधैर्यभक्त्यादि रहितस्य निरन्तरम्।
विरुद्धकरणासक्तेः श्रीकृष्णः शरणं मम।। 7

विषयाक्रान्तदेहस्य वैमुख्यहृतसन्मतेः।
इन्द्रियाश्वगृहीतस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।। 8

एतदष्टकपाठेन ह्येतदुक्तार्थभावनात्।
निजाचार्यपदाम्भोजसेवकोऽदैन्यमाप्नुयात्।। 9

इति श्री हरिदासविरचितं श्रीकृष्णशरणाष्टकं सम्पूर्णम्।

श्री मधुराष्टकम्

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम् ।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।। 1

वचनं मधुरं चरितं मधुरं वसनं मधुरं वलितं मधुरम् ।
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं मधुराधिपते रखिलं मधुरम् ।। 2

वेणुर्मधुरो रेणुर्मधुरः पाणिर्मधुरः पादौ मधुरौ ।
नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।। 3

गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।। 4

करणं मधुरं तरणं मधुरं हरणं मधुरं रमणं मधुरम् ।
वमितं मधुरं शमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।। 5

गुञ्जा मधुरा माला मधुरा यमुना मधुरा वीचिर्मधुरा।
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् 6

गोपी मधुरा लीला मधुरा युक्तं मधुरं भुक्तं मधुरम्।
दृष्टं मधुरं शिष्टं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।। 7

गोपी मधुरा गावो मधुरा यष्टिर्मधुरा सृष्टिर्मधुरा।
दलितं मधुरं फलितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।। 8

इति श्री मद्वल्लभाचार्यविरचितं श्रीमधुराष्टकं सम्पूर्णम्।

श्री नन्दकुमाराष्टकम्

सुन्दरगोपालं उरवनमालं नयनविशालं दुःखहरम्
बृन्दावनचन्द्रं आनन्दकन्दं परमानन्दं धरणीधरम्।
वल्लभघनश्यामं पूरणकामं अत्यभिरामं प्रीतिकरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 1

सुन्दरवारिजवदनं निर्जितमदनं आनन्दसदनं मकुटधरम्
गुञ्जाकृतिहारं विपिनविहारं परमोदारं चीरहरम्।

वल्लभपटपीतं कृतउपवीतं करनवनीतं विबुधवरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 2

शोभितसुखमूलं यमुनाकूलं निरूपशीलं सुखदवरम्
मुखमण्डितरेणुं चारितधेनुं वादितवेणुं मधुरसुरम्।
वल्लभमतिविमलं शुभपदकमलं नखरुचिरमलं तिमिरहरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 3

शिरमुकुटसुदेशं कुञ्चितकेशं नटवरवेषं कामवरम्
मायाकृतमनुजं हलधरानुजं प्रतिहतदनुजं भारहरम्।
वल्लभव्रजपालं सुभगसुचेलं हितमनुकालं भाववरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 4

इन्दीवरभासं प्रकटसुरासं कुसुमविकासं वेणुधरम्
हितमन्मथमानं रूपनिधानं कृतकलगानं चित्तहरम्।।
वल्लभमृदुहासं कुञ्जनिवासं विविधविलासं केलिकरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 5

अतिपरमप्रवीणं पालितदीनं भक्ताधीनं कर्मकरम्
मोहनमतिधीरं फणिबलवीरं हतपरवीरं तरलतरम्।
वल्लभव्रजरमणं वारिजवदनं जलधरशमनं शैलधरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 6

जलधरद्युतिरङ्गं ललितत्रिभङ्गं बहुकृतिरङ्गं रसिकवरम्
गोकुलपरिवारं मदनाकारं कुञ्जविहारं गूढनरम्।
वल्लभव्रजचन्द्रं सुभगसुछन्दं परमानन्दं भ्रान्तिहरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 7

वन्दितयुगचरणं पावनकरणं जगदुद्धरणं विमलवरम्
कालियशिरगमनं कृतफणिनमनं घाततियवनं मृदुलतरम्।
वल्लभदुःखहरणं निर्मलचरणं अशरणशरणं मुक्तिकरम्
भज नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्त्वविचारं ब्रह्मपरम्।। 8

इति श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचितं नन्दकुमाराष्टकम् सम्पूर्णम्।।

* * *